- चतुर्थ अध्याय -

'पत्तों की बिरादरी' के संवाद और भाषाशैली

चतुर्थ अध्याय

" पत्तों की बिरादरी " के संवाद और भाषा-शैली।"

४:१ "पत्तों की बिरादरी" उपन्यास में संवाद -

उपन्यास का तीसरा मूल तत्व संवाद है। " कथोपकथन द्वारा कुछ विचारों को सजीवता देने में सरलता होती है। नाटकों में जो वस्तु अभिनय द्वारा व्यक्त होती है, उपन्यासों में बहुत-कुछ कथोपकथन द्वारा लायी जाती है।"[१] लेखक का उपन्यास में संवाद चयन के पीछे अपना एक निश्चित उद्देश्य होता है। जैसे -

१) कथानक का विकास करना।

२) पात्रों की व्याख्या करना। तथा

३) उद्देश्य को स्पष्ट करना।

लेखक संवादों के माध्यम से उपन्यासों के दृश्योंमें सजीवता लाता है। तथा कथानक का विस्तार प्रस्थापित करता है।

कथोपकथन के माध्यम से उपन्यासकार अपनी कृति के चरित्रों की व्याख्या करता है। और उन्हें विकास की ओर अग्रसर करता है। उपन्यासकार के द्वारा आयोजित उचित, स्पष्ट, सजीव एवं सरस कथोकथन पात्रों के चरित्र की विवृत्ति करने में अपेक्षाकृत अधिक सहायक होते हैं। तथा लेखक कथोपकथन के जरिए पात्रों के माध्यम से अपने उद्देश्य की पूर्ति तक पहूँच पाता है।

उपर्युक्त विवरण से यह सिध्द हो जाता है कि उपन्यासों में कथोपकथन का उद्देश्य केवल पात्रों की बातचीत प्रस्तुत करना ही नहीं

बल्कि इस वार्तालाप को इस प्रकार से प्रस्तुत करना अनिवार्य है कि उसमें पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ तथा उनके अन्तर्मन में निहित उन मन्तव्यों का उद्घाटन हो सके, जो व्यावहारिक संघर्षों को जन्म देते हैं। कथोपकथन से कार्यकलाप में वास्तविकता का भाव आ जाता है, जो केवल वर्णन से नहीं आ पाता।

कथोपकथन योजना के प्रमुख गुण उपयुक्तता, स्वाभाविकता, संक्षिप्तता, उद्देश्यपूर्णता, सम्बन्धता, अनुकूलता, मनोवैज्ञानिकता तथा भावात्मकता हैं। और इन गुणों के साथ-साथ रोचकता, सजीवता, सरसता, सार्थकता आदि गुणों का समावेश किया जाता हैं। उक्त गुणों का मणि मधुकरजी के उपन्यास "पत्तों की बिरादरी" में पूर्ण प्रकर्ष मिलता हैं।

डॉ. शान्ति मलिक ने अपनी समीक्षात्मक रचना "हिन्दी नाटकों की शिल्पविधि का विकास" में संवादों के प्रमुख निम्नप्रकार बताए है -

" १) व्याख्यात्मक संवाद
२) भावात्मक संवाद
३) आवेशात्मक संवाद
४) नाटकीय संवाद
५) हास्यप्रधान संवाद
६) व्यंग्यात्मक संवाद
७) व्यावहारिक संवाद
८) उपदेशात्मक संवाद
९) गम्भीर संवाद
१०) तर्कपूर्ण संवाद

११) मार्मिक संवाद तथा

१२) अलंकारिक संवाद।"[२]

हम उपर देखा चुके हैं कि जिसप्रकार अभिनय को नाटक का प्राण माना जाता है, उसी प्रकार उपन्यासों में संवादों की महत्ता साधारण नहीं है। मणि मधुकरजी ने भी अपने आलोच्य उपन्यास में संवादों के प्रकारों की बहुलता प्रस्थापित की है। हम यहाँपर प्रस्तुत उपन्यास में चित्रित संवादों का विवेचन करेंगे -

४:१:१ व्याख्यात्मक संवाद -

कलात्मकता और सम्प्रेषण के साथ मर्मस्पर्शी घटना तथा किसी विषय-वस्तु का उद्घाटन एक ही वाक्य में करना व्याख्यात्मक संवाद है। ऐसे संवादों में मन-मानस में उठे हुए अनेकविध भावों को उजागर किया जाता है।

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने प्रारंभ में वातावरण निर्माण करते समय अपशकुन, आतंक और भयावह स्थिति की व्याख्या इसप्रकार की है - " अपसगुन और आतंक की डोर तानती हुई कलमुँही तान, अपने अन्तिम सिरे पर चीखा की तरह चिरती हुई ..... चिर कर दूर-दूर रेंग जाती हुई।"[३] फिर उन्होंने एक अनपढ़ औरत के मुँह से कहलवाया है - " गरीब का मुलक तो एक ही है, लेकिन जिसको राजपाट चाहिए, हकूमत चाहिए, उसने धाड़ और पाँव बाँट लिये हैं।"[४]

यहाँपर राजनेताओं पर व्यंग्य कसा है। यहाँ लेखक की व्याख्यात्मक सशक्त अभिव्यक्ति दिखाई देती है।

४:१:२ **भावात्मक संवाद -**

ऐसे संवाद पाठकों के दिलों-दिमागपर जबरदस्त आघात करने में तथा लेखक की मनोभावभूमिपर खड़ा कर देने की क्षमता रखते हैं। इन संवादों में सरसता तरलता, संवेदनशीलता एवं प्रवाहमयता होती हैं।

प्रस्तुत उपन्यास में भावात्मक संवाद निम्नप्रकार आए हैं -

१) जब शुबो और बाऊ कैम्प की ओर आ रहे थे, तो बाऊ भूख और प्यास के कारण आधे रास्ते में ही दम तोड़ देते हैं। तो शुबो भावना-विवश होकर कहता है -

"बाऊ तुम भी मुझे छोड़ गये .... एकदम्म अकेला कर गये .... इस बियाबान में .... ।"[५]

२) जुगनी शुबो से प्यार करती है। शुबो इग्यारसीलाल पर अपना आवेश प्रकट करता है। जुगनी समझदार है, उसे मालूम है कि इग्यारसीलाल पर क्रोधित होने का अंजाम क्या होगा। इसलिए वह शुबो को प्यार से समझाती है - " मैंने तुम्हारी तरह दुनिया का सामना नहीं किया है, शुबो! लेकिन - जानती हूँ कि जिन्दा रहने के लिए जिन्दगी को किस तरह रौंदना पड़ता है।"[६]

३) " तुम्हारा यही अन्त होना था, शुबो!" वह उसके ऐंठकर विकृत हो गये चेहरे को स्नेह से सहलाती हुई बोली,

" लेकिन ..... यह अन्त नहीं, शुरूआत है। यह घर, यह कुँआ तुम्हारे दुश्मनों से बदला लेंगे और एक रोज अपनी लड़ाई खुद लड़ेंगे। इन्हें किसी फौज-फाटे की जरूरत महसूस नहीं होगी।"[७]

४) शुबो और जुगनी का भावनिक वार्तालाप द्रष्टव्य है -

" शुबो , तुमने मुझे भुला दिया ---"

" नहीं, जुगनी।" शुबो के मन में कोमलता उमड़ पड़ी,

"तुम्हें याद करते हुए तो मैं रोज मौत से लड़ा हूँ। मुझे नहीं पता था, तुमसे फिर कभी मोलाकात होगी।"
"मैंने आस नहीं छोड़ी थी। ..... और तुम हारे नहीं। बिलकुल थके नहीं। तुम जुलम सहक ज्यादा पुख्ता हो गये। मैं बहोत खुश हूँ, शुबो।"[८]

लेखक ने प्रस्तुत उपन्यास में स्थान-स्थान पर भावों का अंकन किया है। यही भावात्मक संवाद पाठकों के हृदय को स्पर्श करते हुए आगे निकल जाते हैं।

४:१:३ आवेशात्मक संवाद -

इन संवादों की शैली ओज गुण से परिपूर्ण होती है। ऐसे संवाद पाठकों की धामनियों का खून खौल देने में समर्थ होते हैं। विशेषात: वीर काव्य के अधिकतम संवाद इसीप्रकार के होते हैं। साहित्य की अन्य विधाओं में भी इन संवादों का प्रयोग पात्रों के उत्तेजनापूर्ण मनोभावों को प्रकट करा देने में होता है।

प्रस्तुत उपन्यास में आवेशात्मक संवाद निम्नप्रकार से दृष्टव्य हैं -

१) "आँखें फाड़-फाड़कर क्या देखा रहा है ? मुझे खा जायेगा क्या ?" -- शुबो के उसपर झापट्ने पर कहता है "कमीने!"
"तुम्हारे बुढापे का लिहाज कर तुम्हें छोड़ रहा हूँ आज! ..... लेकिन आइन्दा अगर किसी औरत की बेइज्जती की तो गरदन तोड़कर रख दूँगा, समझे।"[९]

२) "सुबटी को समझा देना शुबो ! वो मेरी छोकरी को तंग कर रही है। मुझे किसी रोज गुस्सा आ गया तो चुटला पकड़ के गला टीप दूँगी।" [१०]

३) "वो पाकिस्तान में हैं - तुम्हारे मुलक में।"
"फालतू का लफड़ा खड़ा मत करो, पुसपाबाई ! किसी माँ के यार ने पखेस्तान बना दिया, किसी ने ईदस्तान। सिरफिरे स्साले। उनके बनाने से होता क्या है ? मुझे तो उन्होंने नहीं बनाया ? तुम्हें भी नहीं। सो हमें मुलुकों में बाँटकर अलग करनेवाले वो धसियारे ..... कौन होते हैं ?" [११]

४) "गरीब का मुलक तो एक ही है, लेकिन जिसको राजपाट चाहिए, हकूमत चाहिए, उसने धड़ और पाँव बाँट लिये हैं।"

"धड़ और पाँव को बीच से काट डालो तो जिन्दा रह सकता है कोई ? बोलो रह पायेगा ?
"जिन्दा कौन है, भई ! सब मरे हुए की माटी पीट रहे हैं।" [१२]

५) "दो तो थ्थारे थे ही, अब तीसरा और बन रहा है - भंगलादेस। उसी के लिए यह जुध हो रहा है।" [१३]

इसप्रकार के आवेशात्मक संवादों का सार्थक प्रयोग प्रस्तुत उपन्यास में हुआ है।

४:१:४ मनोवैज्ञानिक संवाद -

दूसरों की बातों को अनसुना करते हुए अपने मन की बातों मे या विचारों में उलझकर उसी की अभिव्यक्ति करना या शून्य में ताकते हुए अन्तर्द्वंद्व से पूर्ण विचारों की अभिव्यक्ति ही मनोवैज्ञानिक संवाद कहलाते हैं। मनोवैज्ञानिक संवादों में मनोविज्ञान के सिध्दातों का आधार लिया जाता है। हर बात का विश्लेषण उन्हीं सिध्दातों के आधारपर करने का प्रयत्न किया जाता है।

आलोच्य उपन्यास में मनोवैज्ञानिक संवादों की बहुलता नहीं

है। मगर कहीं-कहीं ऐसे संवाद प्रतीत होते हैं -

१) "बाऊ,तुम भी मुझे छोड़ गये ..... एकदम्म अकेला कर गये -- इस बियाबान में .....।"[१४]

२) बदरू अपने आप में, -"मैं क्यों कुछ करूँ, तुम्हारे लिए ?..... तुमने तो मुझे जीते-जी ही मुरदा बना डाला था।"[१५]

इसप्रकार मनोवैज्ञानिक संवादों के उदाहरण देखने मिलते है।

४:१:५ नाटकीय संवाद -

इन संवादों में पात्रा अपने विचारों को एक के बाद एक संक्षिप्त और नाटकीय रूप में प्रस्तुत करते हैं। प्रस्तुत उपन्यास में नाटकीय संवादों की बहुलता दिखाई देती है। इनकी वजह से उपन्यास में रोचकता और प्रवाहशीलता स्थापित होती है। इस उपन्यास में नाटकीय संवाद अनेक स्थानोंपर दृष्टव्य है -

१) " कहाँ से आया है ?"
" उम्मरकोट।"
" खास उम्मरकोट से ?"
" नहीं, उम्मरकोट के पास एक ढाणी है.... फतियाँवाली।"
" फतियाँवाली !"
" हाँ।"
" पखोस्तान है उधार।"[१६]

२) " तुम्हारे पास लेट जाऊँ ?"
" तुम इतनी रात को कहाँ चक्कर लगा रही हो ?"
" इग्यारसीलाल के पास गयी थी।"
" वह तो बहुत खातरनाक है।"[१७]

३) बदरू मियाँ और शुक्रो के बीच संवाद -
" यह तुमने मेरे दिल की बात कही। लेकिन - मैं जिन्ना से नाराज हूँ .."

" जिन्ना कौन ?"
" अब यार - तुम इस न्यासत के पड़पंच को क्या जानो।
यहाँ से उठो, तुम्हे पुसपा बाई ने याद किया है।"
" नही, मैं नहीं जाऊँगा।"
" डरते हो ?"
" डरता तो .... नहीं हूँ मैं।"
" फिर ?"
" नफरत है मुझे ---"[१८]
४) "रावता।"
" क्या बात है, पुसपाबाई!"
" तुम अभी तक यहीं हो ?"
" हाँ। ..... तुमने कोई बुरा सपना देखा क्या ?"
" मेरे पास लेट जाओ। मुझे डर लग रहा है।"
" नहीं, नहीं ..... मेरा कलेजा धुक-धुक कर रहा है।"[१९]

४:१:६ हास्य - व्यंग्यात्मक संवाद -

जिन संवादों में मनो-विनोद किया जाए, वे हास्यपूर्ण संवाद कहलाते हैं। किसी कमजोरी के सम्बन्ध में नफरत, ईर्ष्या आदि भावना से मजाकपूर्ण हृदय को ठेस पहूँचानेवाली बातों का जिक्र किया जाता है, उन्हें व्यंग्यात्मक संवाद कहते हैं।
१) बछराज लड़कों को गुड़ बाँटते समय कहता है -
" तुम लोगों को दो-दो डले!"
" और जो अपने बाप को गाली देकर सुनायेगा, उसे तीन डले।"[२०]
२) " क्यों हँस रहे हो ?"
" वो देखो जुगनी उधार ... सुवटी को। एकदम बकरी लग रही है।"

"जानकी काकी ने उसे दण्ड दिया है। कम्फ की तमाम औरतों के सामने उसने कतरनी से सुवटी से बाल कतर डाले।" "कट गये बाल, हो गयी झाबरी।"[२१]

३) "और माल क्या ? ...."

" भिस्की बोतले हैं उसे, भिस्की। बाड़मेर से आती है पुष्पाबाई के लिए। रोज एक बोतली चाहिए उसको। दिन-रात पीती है और मस्तानी छाँटती है।"

"भिस्की क्या - दारू ही है। नाम इंगरोजी रखा दिया है।"[२२]

४) " सुबै - सुबै क्यों बोका फाड़ रहे हो।"

" कैम्प की रोटियाँ पचती नहीं है क्या ?"

" तुम फिर भिड़ना चाहते हो मुझसे ?"

"होश में रहो, होश में। यह तुम्हारे बाप की जागीर नहीं है, बच्चू।"[२३]

४:१:७ गम्भीर संवाद -

गहन, दार्शनिक और अध्यात्मिक विचारों को जहाँ प्रकट किया जाता हैं, वहाँ गम्भीर संवादों की योजना की जाती हैं। इन संवादों की शैली में गूढ़ता, गहनता, तात्त्विकता एवं गम्भीरता प्रत्यक्ष परिलक्षित होती हैं।

प्रस्तुत उपन्यास में गम्भीर संवाद निम्नप्रकार से आयें हैं -

१) "क्या करना चाहिए ?"

"भयभीत होने से तो कुछ होगा नहीं, सोच लो।"

"उपाय करना पड़ेगा।"

"कोई बतला रहा था कि आजकल वो .... इधर ही चक्कर लगा रहा है।"

"मेरा खयाल है, उम्मरकोटवालों के कुछ आदमी हम यहाँ बुला लें। वे हमारे साथ रहेंगे और सब सँभाल लेंगे।"[२४]

२) " तुम भण्डारे जाकर सो जाओ।"

" खास बात है क्या ?"

" हाँ। सुनो, एकदम घोड़े मत बेच देना। कोई आहट हो तो ध्यान रखना।

" सुवटी कहाँ है ?"

" होगी यहीं कहीं और क्या।"

" मुझे तो नजर नहीं आयी।"[२५]

३) " हरलो घिर गया है --"

" क्या ---"

" हुआ क्या ?"

" बेस्सफ के फौजियों ने पूरी टोली को ही --" अभी एक आदमी समंचार लेके आया है।"

" कहाँ पर ? किस जगह ?"

" पखोस्तान की सींव के पास।" " जमके लड़ाई हुई है। ..... बहोत दिनों से वे लोग हरलो के लिए खूनस खाये हुए थो।"[२६]

४:१:८ मार्मिक संवाद -

जिसमें जीवन की यथार्थ बातों को प्रभावकारी शब्दोंमें अभिव्यक्त करते समय सच्चाई, या जीवन का कटु सत्य उद्घाटित हो, मन-मष्तिक को सोचने के लिए बाध्य करते हो। इसी संवादों को मार्मिक संवाद कहते हैं। जैसे ----

१) " यह भौंच्चो पखोस्तान और ईंदस्तान का खूब टप्टा है।" भूखो आदमी का कोई मुलक होता है क्या, जहाँ दो टूक मिलेंगे, चला आयेगा।"[२७]

२) " मरने से पहले .... बस एक बार ताजा सिंकी हुई रोटी का सुवाद चखा लेना चाहती हूँ -- यही .... यही एक आखारी इंच्छया रह गयी है अब तो।"[२८]

३) " क्या पक रहा है ?"

" दलिया। .... आज गुड़ मिलेगा न, मीठा दलिया बनेगा।"

" लापसीवाला या राबड़ीवाला ?"

" राबड़ीवाला।"

" बाटियाँ तोड़ते-तोड़ते दाँत घिस गये है, सच्ची।"

" अपना आटा दे देना। तुम्हारे लिए भी बना दूँगी।"[२९]

४:१:९ व्यावहारिक संवाद -

नित्यप्रति के व्यवहार में प्रयुक्त होनेवाले संवाद ही व्यावहारिक संवाद कहलाते हैं। इनमें न अलंकारों की अधिकता होती है, न काव्यत्व का अत्याधिक आग्रह होता है। इन संवादों में भाषा की सजीवता और प्रवाह देखने को मिलता है।

प्रस्तुत उपन्यास में व्यावहारिक संवाद निम्नप्रकार से दिखायी देते हैं।

१) " मेरा जी ठीक नहीं है।" " जिद मत करो।"

" अच्छा-अच्छा, नहीं करूँगी। ... लेकिन मुझे एक बात का डर है। वो यह कि ... इग्यारसीलाल तुम्हें कहीं कम्फ से निकाल न दे।"

" क्यों ? मैंने ऐसा क्या किया है ? मैं तो अपना काम करता हूँ ---"

" काम-वाम की किसको परवा है ? जिसके साथ जवान बुगाई हो, इग्यारसीलाल उसी को इस कम्फ में रखाता है..... तुम अक्केले हो। तुमको खामखाँ क्यों टिक्कड डालेगा वो ? उसको क्या फायदा।"[३०]

२) " क्या किस्सा है ?"

" दो जनानियाँ हैं। भारती के लिए आयी हैं।"

" बड़ी मुश्किल है। आखिर किस-किसको भारती करें ?

खैर, "इन दोनों को तो रखा लो।"[३१]

३) " मुझे क्या लेना-देना है।"

" फिर भी ..... मैं तुम्हें होस्यार कर देना ठीक समझता हूँ। अपने मतलब के लिए वो लोगों को गाँठती रहती है, लेकिन बदले में देती कुछ नहीं।"[३२]

४) " यह थानेदार तो बड़ा बकबकिया है।"

" टुकडा डाल दिया ?"

" हाँ, लेकिन लालच देखो इसका - इतने सिपाही घोरकर ले आया है। सबके हाथ में कुछ-न-कुछ तो देना ही पडेगा।"[३३]

४:१:१० <u>तर्कपूर्ण संवाद -</u>

तर्कपूर्ण शैली में लिखे संवाद साधारण पाठकों के लिए उपयुक्त नहीं होते। क्योंकि इन संवादों में जटिलता एवं दुर्बोधता होती है। असाधारण पाठकों के लिए ये सुबोध एवं ग्राह्य होते हैं। ये संवाद मनुष्य को सोचने के लिए बाध्य करते हैं। कभी - कभी सामान्य आदमी भी तर्क करने लगता है।

प्रस्तुत उपन्यास में कहीं-कहीं तर्कपूर्ण संवाद भी दिखाई देते हैं -

१) " शुबो !"

" इग्यारसीलाल से बचके रहना। वो ... अपनी बन्दूक साफ कर रहा है, और अव्वल दर्जे का हरामी ! जाने क्या कर डाले।"[३४]

२) " वो नकसली - उकसली लोग थे। अच्छा हुआ। नेता बनके उकड़ता फिरता था, मेरा जैतपालसिंघा। हकूमत सिर में बोलने लगी थी। मुझसे बोला, अभी तुम कैम्प में जाके रहो और कुछ कमाई-धामाई कर लो, फिर पोलटिकिस करना। अरे मुझे सब मालूम है, उसको कोई और मिल गयी थी। वही भोपालवाली बेगम साईबा ... रॉड़ होगी और क्या।"[३५]

३) " वो देखा, उधार ..... क्या है "

" मुझे तो धूल का गुब्बार लगता है। आँधी आयेगी।"

" गौर से देखकर बता। बादल तो नहीं है ?"

" हो सकता है।"

" इस बार भी अगर बरखा नहीं हुई तो दुरभिक्खा खा जोयेगा हम लोगों को।"[३५]

४:१:११ उपदेशात्मक संवाद -

उपदेशात्मक संवाद अभिधात्मक शैली में होते हैं। जीवन के नीति-मूल्य, आदर्श इन संवादों से व्यंजित किये जाते हैं। पाठकों को अनादर्श, अज्ञान, अधर्म से बचाना इन संवादों का प्रयोजन होता हैं। लेकिन इन संवादों का प्रयोग उतना ही होना चाहिए जितना कथा-विकास के लिए आवश्यक हो।

प्रस्तुत उपन्यास में उपदेशात्मक संवाद निम्न लिखीत दिखाई देते है --

१) " शुबो !"

" तुमने यह अच्छा नहीं किया।"

" लेकिन, मैंने बुरा क्या किया ?"

" तुम्हे सब्र रखाना चाहिए।" " कब्र में निकाल दिये गये तो कहाँ जोओगे तुम ? जान के लाले पड़ जोयेंगे। मैं.... तुम्हारे गुस्से को समझाता हूँ लेकिन - अभी तो बर्दाश करना पेड़ेगा। और कोई चारा नहीं।"[३७]

२) " जंग लोहे को खा जाता है, अभाव आदमी को।"

" फिर भी जो दु:ख झोलता है, जिन्दगी उसी को कुछ देती है।"[३८]

३) " जुगनी, तुम मुझे कमजोरी से उपर उठा देती हो। सच्ची, कभी-कभी इस माहौल में बड़ी थाकान चढ़ जाती है और सब कुछ छोड़-छाड़कर कहीं भाग जाने का जी होने लगता है।"

" बात यह है शुबो, कि जो दुनिया हमें मिली है, वह हमारी बनायी हुई नहीं है -- लेकिन वह इस तरह हमको शिंकजे में कस लेती है कि फिर छटपटाहट के सिवा कोई रास्ता नजर नहीं आता। असल चीज यह है कि हमें ऐसी दुनिया को मंजूर ही नहीं करना चाहिए। सख्त होकर और उसे परे झाटककर, अपने आसपास को समझाना चाहिए और जहाँ जरूरी हो, चोट करने से नहीं चूकना चाहिए।"[३९]

४) " मैं कभी-कभी ऐसे ही आपा खो बैठता हूँ।"

" किसी के भड़काने से भड़कना ठीक नहीं। ऐसा कोप हमे कमजोर बना देता है।"[४०]

४:१:१२ अलंकारिक संवाद -

जिन संवादों में अलंकारों से युक्त भाषा होती है, तथा अपने विचारों को अलंकारों की सहायता से कलात्मक या सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया जाता है, वहीं अलंकारिक संवाद दिखाई देते हैं। लेखाक को इस बात का खायाल रखाना चाहिए कि अलंकारों का प्रयोग साहित्य-सौंदर्य वर्धन के लिए होता है। अत्यधिक अलंकारों के प्रयोग से साहित्य का स्वाभाविक सौन्दर्य नष्ट होता है।

प्रस्तुत उपन्यास में अभिशिक्षित पात्रों की भरमार होने के कारण उनके संवादों में अलंकारिकता नहीं मिलती मगर कई स्थानोंपर उपमानों का प्रयोग दिखाई देता है। जैसे --

१) " गरीब का मुलक तो एक ही है, लेकिन जिसको राजपाट चाहिए, हकूमत चाहिए, उसने धड़ और पाँव बाँट लिये है।"[४१]

आलोच्य उपन्यास में मणि मधुकरजी ने कथानक के विकास की दृष्टि से बहुत सोच-विचार करके सहज स्वाभाविक, चुटिले, संक्षिप्त, अर्थ गर्भित विविध प्रकार के संवादों का अन्तर्भाव किया हैं। इससे कथानक के विकास में बाधा नहीं आती बल्कि कथानक के सौंदर्य में वृध्दि ही हुई है। इन संवादों से पात्र भी सहज ढंग से उभर आयें हैं। प्रस्तुत उपन्यास में लेखक का राजस्थानी जन-जीवन का चित्राण करना, अकाल पीड़ितो की पीड़ाओं को तथा उपनर हुए अन्याय-अत्याचार को उद्घाटित करना प्रमुख उद्देश्य रहा है। इस दृष्टि से लेखक को काफी सफलता मिली है। उन्हें संवाद योजना में पूरी सफलता प्राप्त हुअी है।

४:२ "पत्तों की बिरादरी" की भाषा-शैली -

४:२:१ भाषा -

भाषाशैली उपन्यास का महत्वपूर्ण तत्व है। उपन्यास साहित्य सृजन के प्राथमिक काल में भाषा का इतना महत्व नहीं था। भाषा के बजाय विषय-वस्तु को प्राधान्य दिया जाता था। आज-कल उपन्यास में भाषा का अपना अलग स्थान है। भाषा के जरिए उपन्यासकार पाठकों पर विशेषा प्रभाव डाल सकता है। लेखक सामान्य, सुलभ भाषाशैली द्वारा पात्रों की सामान्य विशेषाताओं पर प्रकाश

डालता है। लेखक विशेष प्रभाव के लिए सामान्यत: साहित्यिक भाषा को त्याग बोलचाल की भाषा, अंचल विशेष की भाषा को अपनाता है।

डा. सुरेश सिनहा का उपन्यास में भाषा के सृजन के बारे में मत दृष्टव्य है - " प्रत्येक जीवन परिवेश को अभिव्यक्त करने के लिए भाषा का अपना रूप होता है। परिवेश में परिवर्तन के साथ भाषा का स्वरूप नया हो जाता है। परिवर्तन के इन सूत्रों को न पहचान सकना अविवेकपूर्ण दुराग्रह है। जीवन परिवेश के बदल जाने पर भी जब हम उसी भाषा का प्रयोग करते रहते हैं तो विडम्बनाएँ उत्पन्न होती हैं और मामूली सा कथ्य भी अविश्वसनीय या चौंकनेवाला बन जाता है, और वह हमसे कोई रिश्ता जोड़ नहीं पाता। कथ्य जितना ही प्रामाणिक होगा भाषा उतनी ही सहज होगी।"[४२]

प्रस्तुत उपन्यास में मणि मधुकरजी ने सरल, सरस और प्रवाहपूर्ण भाषा को अपनाया है। इसके साथ ही उनके उपन्यास में सरल स्वाभाविक भाषा, प्रतीकात्मक भाषा, राजस्थानी मिश्रीत हिन्दी भाषा तथा विविध शब्द, मुँहावरे-कहावतें आदि का भी प्रयोग हुआ है।

भाषा के अन्तर्गत निम्नलिखित रूपों का अध्ययन आवश्यक है - १) शब्दप्रयोग के विभिन्न रूप २) भाषा-सौन्दर्य के साधान ३) प्रतीकात्मक भाषा ४) महावरें - कहावतें ५) सूक्तियाँ ६) वाक्य-विन्यास आदि।

४:२:१:१ शब्दप्रयोग के विभिन्न रूप -

उपन्यासकार मणि मधुकरजी की भाषा पात्रानुकूल , सूक्ष्म, सांकेतिक और प्रवाहपूर्ण है। इन्होंने राजस्थानी बोली के साथ ही

देशी-विदेशी स्त्रोतों से विविध प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है। जैसे -

४:२:१:१:१ तत्सम शब्द -

प्रस्तुत उपन्यास के अनेक पात्र अशिक्षित और अकाल-पीड़ित हैं। इनकी भाषा अपने अंचल के अनुसार राजस्थानी मिश्रित हिन्दी है। फिर भी लेखक ने कुछ स्थानों पर तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है। जैसे -

" क्षितीज, संकल्प, निष्पाप, आकाश, जन्म, आत्मा, दिन दुःख, पग, दृष्टि, नख, मन, क्रोध आदि।"[४३]

४:२:१:१:२ तद्भव शब्द -

इस उपन्यास के पात्रों की बोलचाल की भाषा में तद्भव शब्दों की भरमार दिखाई देती है। जैसे -

" अपसगुन, ताकना, चन्दरमा, मूरख, दीठ, पिरथी, अरथी, जलम, भागवान, नगन, परधान, आग, पंगत, आँख, नाक, कान, पगथाड़, निस्चै, बरखा, ईश्तरी, हाथ, इशार, परसन्न, मंशा आदि।"[४४]

४:२:१:१:३ देशज शब्द -

प्रस्तुत उपन्यास का परिवेश राजस्थान होने के कारण राजस्थानी लोकजीवन, भारत-पाक बँटवारा और अकाल की भयावह स्थिति का चित्रण किया गया है। इसमें राजस्थानी शब्दों की बहुलता दिखाई देती हैं। जैसे -

" ढूह, गरदन, जुर्म, डग, न्याव, टाबर, खींप, टका,

टूँग, ठाट, ठूँठानी, दिक्कत, दस्त, दाग, कायर, टिक्कड़, दूजी, गैंदगी गाड़ीवान, जुधा, पड़पंच, परगट, पत्तों, बिसराम, बिस्तर, बीमार, बीर, बीनणी, बिरादरी, बच्चों, बोतल, मगज, मतलब, मींगणी, रूजगार, सुअर समाचार, सामरथ, स्यात, साँच, सिरकार, साँकल, शय्या, शराबी, शान, शासत, शव, भूतणी, लुगाई।"[४५]

४:२:१:१:४ विदेशी शब्द -

(अ) अरबी - फारसी -

प्रस्तुत उपन्यास के कई पात्र अरबी-फारसी शब्दों का प्रयोग करते हैं। जैसे -

" लायक, खामोश, तकलीफ, ज़मीन, ज्यादा, इन्तजार, बेगम, ईदस्तान, पख्तोस्तान, फैसला, मंजिल, आसमान, निगाह, अंजाम, अन्दाजा, स्यात, खातरनाक, हैसियत, वखात, सुपारस, आदमी, खुस्स, मुसीबत, जरूरत, ऐलान, मस्तानी, आईन्दा, बेइज्जत, शादी, दुश्मन, नफरत, इलाका, जिनगी, दुनिया, जासूस, मुकाबला, माहौल, अरज, दिल्लगी, मेहरबान, थानेदार, इत्रा, नजदीक, कुरबान, इन्तजाम, शरारत, जिस्म आदि।"[४६]

(ब) अंग्रेजी शब्द -

" टम्परेली, कम्फ, भिास्की, फम्मली, एम्मेले, अम्पी, मनीस्टर, पार्टी, टिकट, स्योर, बक्सा, डिऊटी, लाट, पुलीस, इसकीम, पिस्तौल, पोलटिक्स, फोटु, प्राईमिनिश्टर, जेल, सिकरेट, रिपोट, बस्सफ, बोर्डर-सिक्योरटी फोर्स, पैसा आदि।"[४७]

४:२:१:१:५ अन्य शब्द -

भाषा में सहज स्वाभाविकता और पात्रानुकूलता की

दृष्टि से लेखक ने अन्य अनेक प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है। जैसे -

(प) ध्वन्यार्थक शब्द -

१) " बातों और किस्सों की गूँज। झिंगुरों की झिन-झिन-झिन और उसमें जागता हुआ कोई अव्यस्त रहस्य।"[४८]

२) " धोतिये के कमरबन्द की गाँठ से उसने घूरा निकाला और बजाने लगा - टिंउटिंऊटिउटिऊटिंऊटिंउ ..... ।"[४९]

३) " किन्तु उसका सण्टा सड़-सड़ाक सड़-सटाक हवा में गरजता रहा।"[५०]

४) " सिराज ने कुकड़ू-कूं की बाँग लगायी।"[५१]

५) " कम्मी ही-ही-ही हँसती।"[५२]

(फ) निरर्थक शब्द -

ये शब्द निरर्थक है, किन्तु भाषा में स्वाभाविक प्रवाह लाने की कोशिश में प्रयुक्त हुए है।

" होश-हवास, आकुल-बाकुल, मुरगा-वुरगा, काम-वाम, मलाई-वलाई, सेवा-टहल, भगवान-अगवान, मुलुक-उलुक, खाली-पीली, अनाज-वनाज, गुम्म-सुम्म, जाल-जंजाल, फरजी-धारजी, कूदती-फाँदती, आतमा-वातमा, मौत-वौत, ताला-वाला आदि।"[५३]

आलोच्य उपन्यास में निरर्थक शब्दों की बहुलता दिखाई देती है। लेकिन उपन्यास के प्रवाह तथा रोचकता में बाधा नहीं निर्माण हुई।

(ब) अपशब्द -

साहित्य में अपशब्द अवांछनीय होते है, किन्तु कभी-कभी

पात्रानुकूल भाषा के प्रयोग में ऐसे शब्द आवश्यक महसूस होते हैं। विशिष्ट सामाजिक, राजनीतिक,परिस्थिति में कथावस्तु में यथार्थता का अभास दिलाने के लिए, तो कहीं विषाय परिस्थितियों के प्रति आक्रोश प्रकट करने के लिए, तो कहीं पात्रों की विशिष्ट मनोवृत्ति उजागर करने के लिए इन शब्दों का प्रयोग किया दिखाई देता है --

१) " हरामजद्दे"[५४]

२) "कुत्तें !"[५५]

३) " जगत-रण्डी "[५६]

४) " जाँघिये सूँघाना"[५७]

५) " लालची कुत्ता, स्साला।"[५८]

६) " हरामी "[५९]

७) " चूतड़"[६०]

इसमें "शशुरे" और "स्साला" इन शब्दों का तो बार-बार प्रयोग हुआ है।

(भ) द्विरुक्त शब्द -

भाषा के सौन्दर्य में अभिवृध्दि लाने के लिए ऐसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है। किन्तु इनकी अतिशयता से भाषा प्रवाह में बाधा भी पहूँच सकती है। लेखाक ने कहीं-कहीं ऐसे शब्दों का प्रयोग भाषा को सहज, प्रवाहपूर्ण और स्वाभाविक बनाने के लिए किया हुआ दृष्टिगोचर होता है।

" कण-कण, जन-जन, पल-पल, फलक-फलक, अपनी-अपनी, कित्ते-कित्ते,सूजी-सूजी, जल्दी-जल्दी, रेंगता-रेंगता, आस्ते-आस्ते, गहरी-गहरी, पसीना-पसीना, तेज-तेज, शीतल-शीतल, किनारे-किनारे, पाँव-पाँव, रोनी-रोनी आदि।"[६१]

४:२:१:२ भाषा-सौन्दर्य के साधन -

किसी भी रचना की सार्थकता उसमें व्यक्त विचार और भावों को सहज-सुंदर और आकर्षक ढंग से अभिव्यक्त करने में होती है। स्वातंत्र्योत्तर काल के उपन्यासकार अपनी अभिव्यक्ति को सुंदर और आकर्षक बनाने के लिए भाषा के विभिन्न उपकरणों का प्रयोग करते आये हैं। अलंकारिक भाषा, प्रतीकात्मक भाषा, आवेशात्मक भाषा, सहज-स्वाभाविक भाषा, पात्रानुकूल भाषा, मुहावरे-कहावतें, सूक्तियाँ और वाक्य - विन्यास आदि। मणि मधुकरजी के आलोच्य उपन्यास में कुछ प्रमुख उपकरण सार्थकता के साथ प्रयुक्त हुए है।

४:२:१:२:१ अलंकारिक भाषा -

लेखक ने अपनी अभिव्यक्ति को अधिक आकर्षक बनाने के लिए अलंकारिक भाषा का प्रयोग किया हुआ दिखाई देता है। इसमें विशेषण, रूपक, अनुप्रास, उपमान आदि अलंकारों के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान की है।

(म) विशेषण -

" भूरा टिला, सूखी हवा, खुल्ला अक्काश, सन्निपात के मरीज, नंगी पीठ, तेज कदम, मुग्धा भाव, रंगीन पत्थार।"[६२]

(य) रूपक -

१) " पुसपाबाई अपने तम्बू में ऐसे उछलने लगी, मानो सारे बदन में लाल चिटियाँ चिपट गयी हों और जमीन में हर जगह साँपों के बिल नजर आने लगे हों।"[६३]

२) " दलदल में जनम और दलदल में मौत।"[६४]

३) " दिन में लगता था, रेत नहीं .... गाढी-गाढी धूप ही उड़ रही है और रात में, रात उड़ती हुई नजर आती थी, बकरे की खाल का दोवड़ ओढे हुए।"[६५]

४) " सुबह हुई, सूरज उगा तो किरनों में पानी की कोमल धावल अँगडाइयों का खुमार रचा हुआ था।"[६६]

(र) उपमान -

१) " सूअर के बच्चे।"[६७]

२) " वो नचनी नहीं, भूतनी है।"[६८]

३) " उन्होंने हमें सिरफ पेट समझा लिया है यानी समूचे तन में केवल पेट।"[६९]

४) " झग्यारसीलाल को खारगोशिया बना लिया है।"[७०]

५) " बिस्तर ऐसा लगता है, मानो पवन-हिंडोला।"[७१]

(ल) अनुप्रास -

१) " बालू भाड़भूँजे के भाड़ की तरह भभाकती रहती थी।"[७२]

२) " अपने अन्तिम सिरे पर चीखा की तरह चिरती हुई चिर्र का दूर-दूर रेंग जाती हुई।"[७३]

४:२:१:३ प्रतीकात्मक भाषा -

प्रतिकों का सहारा लेकर गुढ़ तथ्यों को उभारा जाता है। आलोच्य उपन्यास का नामकरण ही प्रतीक रूप में किया है।

१) " ऋतुओं की मार से जब पेड़ उजड़ने लगता है तो पत्ते सूखा-सूखाकर गिरने और बिखारने लगते है। अपने गाँव-घार को छोड़ कर दुःखा-दैन्य के बोझा को ढोते हुए वे पत्ते ..... जाने कहाँ-कहाँ तक रेलों में बहते-उडते चले जाते हैं। ..... यहीं है पत्तों की अपनी बिरादरी।"

२) " यहीं अन्धी जिनगी है जब शोष। ..... पत्तों का रेला जहाँ थाम गया है, एक उखाड़ी-उखाड़ी बस्ती बन गया है ----------। " ७५

३) " अचानक तमाम चेहरों पर धुआँ उफन पड़ा और कुछ क्षणों बाद उस धुएँ में से लपटे उठने लगीं। "७६

४) " गरीब का मुलक तो एक ही है, लेकिन जिसको राजपाट चाहिए, हकूमत चाहिए, उसने धड़ और पाँव बाँट लिये हैं। " ७७

४:२:१:४ आवेशात्मक भाषा -

ओजगुण से परिपूर्ण भाषा को आवेशात्मक भाषा कहते है। लेखक अपने उपन्यास में जुलम, अन्याय, अत्याचार का प्रतिरोध करने के लिए कहीं न कहीं ऐसे पात्रों का चयन करता है कि उस पात्र की भाषा में आवेश झलकता हुआ दिखाई देता है। जैसे --

१) " तुम्हारे बुढ़ापे का लिहाज कर तुम्हें छोड़ रहा हूँ, आज!.... लेकिन आइन्दा अगर किसी औरत की बेइज्जती की तो गरदन तोड़कर रख दूँगा, समझे।"७८

२) " एक बात कानों का मैल निकाल के सुन लो। इस बार, कम्फ का अनाज उम्मर-शुम्मरकोट गया तो कत्तल हो जायेगा।"७९

३) " मगज मत खाओ। जाओ रास्ता नापो अपना! हमारे सामने तो जो कोई ईंदस्तान-पखोस्तान का बखान करेगा, स्साले के डूँग में भूसा भर देंगे।"८०

इस प्रकार " पत्तों की बिरादरी" में आवेशात्मक भाषा झलकती है।

४:२:१:५ पात्रानुकूल भाषा -

लेखक ने उपन्यास को प्रभावपूर्ण और प्रवाहमय बनाने के लिए तथा इसके साथ-साथ चरित्र विशेष के व्यक्तित्व को उभारने के लिए पात्रानुकूल भाषाका चुनाव किया है।

१) शुबो - " अच्छा,..... बाऊ, अब चलूँ।..... अबै फेरू कदै ई नेई मिलालाँ आपाँ, म्है थाँरै च्यानणै रो बीज, थाँनै म्हाँरा घाणाँ-घाणाँ सिलाम, खिमाँ चावूँ, बाऊ .... अबै खिमाँ चावूँ। .... ।"[८१]

२) सुवटी - " तुम्हारा यह घोसला अच्छा है।" तुम्हारे पास लेट जाऊँ ?"

" तुम इतनी रात को कहाँ चक्कर लगारही हो ?"

" इग्यारसीलाल के पास गयी थी :"[८२]

३) बछराज - " तुमने अच्छा नहीं किया।"

" लेकिन, मैंने बुरा क्या किया।?"

" तुम्हें सब्र रखाना चाहिए।"[८३]

४:२:१:६ सहज-स्वाभाविक भाषा -

प्रस्तुत उपन्यास में जगह-जगह पर सहज स्वाभाविक भाषा का चयन दृष्टव्य है। जैसे --

१) " अब यहाँ पग रखाने को भी जगह नहीं। मेरे सिर पर चढोगे क्या ?"

" जाओ, जाओ, रास्ता नापो अपना।"

" बोल दिया ना, फूटो यहाँ से। बहरे हो क्या ?"

" ऊँट की तरह थोबड़ा उठाये क्या देख रहे हो ?"[८४]

२) " गिराओ मत। एक-एक कण सँभाल के खाओ।"

" शुबो, ये बोरे यहाँ किसने छुपाये ?"

" बिलकुल ठीक कहते हो। मत ले चलो।"[८५]

४:२:१:७ मुहावरें-कहावतें -

भाषा को सजीव और प्रभावशाली बनाने के लिए तथा भाषा में पांडित्य लाने के लिए मुहावर - कहावतों का प्रयोग किया जाता हैं। इसका प्रयोग अर्थबोध को देखकर किया दिखाई देता है।

(व) मुहावरें -

" घुमेरी लगाना, चिर्र-चिर्र कर दूर रेंग जाना, डग भरना, ठँसाठँस लोग भरना, हेकडी भूल जाना, पलके मूँदना, पसीना-पसीना होना, पाँव जाम होना, सिर खोल डालना, पौ फटना, शेखी बघारना, बोरिया-बिस्तर गोल करना, राम-नाम सत होना, दिन में तारे नजर आना आदि।"[८६]

(श) कहावतें -

१) " मन-मन भावे, मूँडी हिलावे।
२) खूब गोरा जैसे दूधा का डोरा।
३) जंग लोहे को खा जाता है, अभाव आदमी को।
४) जिस थाली में खाना, उसी में छेद करना।"[८७]

४:२:१:८ सूक्तियाँ -

जीवन के अनुभवगत सत्यों को सूक्तियों के रूप में रखा जाता है। आलोच्य उपन्यास में निम्न प्रकार की सूक्तियाँ आ गई है।

जैसे --

१) " भूखे आदमी का कोई मुलक होता है क्या जहाँ दो टूक मिलेंगे चला जायेगा।"[८८]

२) " जब तक "नाज" है, तब तक "आज" है।"[८९]

३) " औरत एक बार गड्ढे में गिर जाये, तो फिर उसके उबरने की उम्मेद कम।"[९०]

इसप्रकार " पत्तों की बिरादरी" उपन्यास में विविध प्रकार के वाक्यों का प्रयोग मिलता हैं। छोटे और सरल वाक्यों के साथ इनकी भाषा में नाटकीयता, चुटीलापन होने के कारण इसकी भाषा सार्थक बन गयी है। इसमें राजस्थानी मिश्रित हिन्दी का अधिक्य दिखाई देता है। पात्र ज्यादातर अशिक्षित होने के कारण भाषा में अपभ्रंश पदों की भरमार दिखाई देती है। फिर भी भाषा पर लेखक की गहरी पकड़ दिखाई देती है।

४:२:२ शैली -

डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र के अनुसार " वास्तव में भावाभिव्यक्ति का माध्यम भाषा है, और इस माध्यम के प्रयोग की रीति या विधि शैली है।"[९१]

शैलियों के कई प्रकार है, मगर आलोच्य उपन्यास में विवरणात्मक शैली, चेतनाप्रवाह या पूर्व-दीप्ति शैली, नाटकीय शैली, व्यंग्यात्मक शैली, प्रतीकात्मक शैली आदि शैलियाँ प्रमुख रूप से आयी हुई दिखाई देती है।

४:२:२:१ विवरण शैली -

हिन्दी उपन्यासों के प्रारंभ से इस शैली का प्रयोग होता आ रहा है। यह शैली परम्परागत है। इसमें वातावरण निर्मिती की जाती है। लेखक जगह-जगह पर विवरणात्मक शैली की प्रस्थापना करता रहता है। जैसे --

१) " शुबो, चोबीस बरस का शुबो, दूसरी बार रोया था, इस तरह .... फिर बाऊ ने अपनी विवशता भरी बाहों में लपटेकर उसे अलग कर दिया था, वहाँ से दूर ले गये थे।"[९२]

२) " लेकिन अचली जाग रही थी, अपने शरीर की तनतनाहट को समेटती हुई। इस तनतनाहट को वह कभी नहीं समझ पायी। कितने लोग पीछे छूट गये थे, बछराज मर चुका था, लेकिन अचली एक भयानक मौत को अपने देह में रमाये जी रही थी और कामनाओं को निर्ममता से निचोड़कर क्या-क्या देखा-जान रही थी।" आदि [९३]

४:२:२:२ चेतनाप्रवाह या पूर्वदीप्ति शैली -

पूर्वदीप्ति या फ्लैश-बॅक शैली में जीवन की घटनाओं का वर्णन स्मृति-तरंगों के रूप में होता है। आलोच्य उपन्यास में चेतनाप्रवाह या पूर्वदीप्ति शैली इसप्रकार दृष्टव्य है --

१) " अजैदान जब तक जिया, मौत के खिलाफ और उन तमाम लोगों के खिलाफ-जो आदमी की औकात को नष्ट करने के लिए हत्यारों की हाट में दलाली करते हैं, लड़ता रहा। ..... भाटी राजा ने अपने गढ़ के दरवाजे के ठीक सामने लकड़ियों का ढेर लगवाया था, अजैदान के लिए चिता चिनवायी थी और उसे जिन्दा ही जलाकर भून डाला था।"[९४]

२) " नींद में कई रपटनों और खान्दकों से गुजरते हुए अचानक शुबो एक अनन्त दलदल में फँस गया। उसमें से न निकल पाने की असहायता में वह एक दम पसीना-पसीना हो गया।"[९५]

प्रस्तुत उपन्यास का अंत भी फ्लैश बैक पध्दति से लिया है।

४:२:२:३ नाटकीय शैली -

नाटकों जैसा प्रभाव एवं गति की तीव्रता लाने के लिए इस शैली का प्रयोग किया जाता है। पात्रों के भावात्मक स्थिति को इस शैली में अभिव्यक्त किया जाता है।

१) " तबीयत ठीक नहीं है क्या ?"
" नहीं, बस -- ऐसे ही .... "
" अहे - रे, तुम्हें तो बोखार है।"
" अच्छा "
" कोई दवा-उवा ली है ?"
" ले लूँगा।"
" शाम तक तो ठीक थे तूम।"
- - - - - - - - - - - - -
" नहीं, इच्छा नहीं।"
" चा से आराम मिलेगा, सच्ची।"[९६]

२) " जुगनी की तो गत खाराब है।"
" गत खाराब है ?"
" हाँ, महावारी पर है वो।"
" अच्छा ? कब से ?"
" कल रात को हो गयी थी ? तीन-चार दिन तो लगेंगे ही।"[९७]

४:२:२:४ व्यंग्यात्मक शैली -

व्यंग्यात्मक शैली में नफरत, ईर्ष्या आदि भावनाओं को तथा मजाकपूर्ण ढंग से हृदय को ठेस पहुँचनेवाली बातों का जिक्र किया जाता है। प्रस्तुत उपन्यास में व्यंग्यात्मक शैली के उदाहरण द्रष्टव्य है -

१) " मैंने हरलो के साथ तुम्हारी लड़ाई देखी थी। "
" ओह।" शुबो को ताज्जुब हुआ, " तुम उधार क्यों गये थे ?"
" तुम्हें खात्तम करने के लिए।"
" बन्दूक लेकर ?" शुबो ने ताना लगाया।"[९८]

२) " मेरे साथ रहोगे तो ऊनत्ती करते ही चले जाओगे।
कैम्फ में ..... मरद कोई नहीं सब चूहे है।
नाज खाते है और मींगणी करते हैं।"[९९]

३) " सुबै-सुबै क्यों बोका फाड रहे हो।"
" कैम्प की रोटियाँ पचती नहीं है क्या ?"
" तुम फिर भिड़ना चाहते हो मुझसे ?"
" होश में रहो, होश में। यह तुम्हारे बाप की जागीर नहीं है बच्चू।"[१००]

४:२:२:५ प्रतीकात्मक शैली -

जिन भावों को प्रकट करने में कठिणाई होती है उन्हें सहज एवं प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करने के लिए प्रतीकात्मक शैली को विकास हुआ।

१) " हवा आयेगी और ये पत्ते फिर आगे उड़ जायेंगे।"[१०१]

२) " एक गिरज-गिध्द अपने काले-डरावने पंखों को फड़फडाता हुआ उपर से निकला और सरकण्डों के झूण्ड की ओर चला गया।"[१०२]

३) " गोदारी पहले तो बेकल-सी सब ओर "बाशिया, बाशिया! पुकारती हुई भागती रहीं, फिर तोड़कर फेंक दी गयी बेल की तरह जमीन पर गिर पड़ी।"[१०३]

प्रस्तुत उपन्यास का परिवेश राजस्थान होने के कारण पात्रोंके मुँह से राजस्थानी भाषा झलकती है। लेखक ने कथानक को प्रभावकारी बनाने के लिए विविध ढंगी भाषा तथा विविध शैलियों को अपनाया है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि उपन्यासकार मणि मधुकरजी ने काफी सोच-समझकर आलोच्य उपन्यास में संवादों का चयन किया है। उक्त उपन्यास में व्याख्यात्मक, भावात्मक, आवेशात्मक, नाटकीय, मनोवैज्ञानिक, हास्य-व्यंग्यात्मक, गंभीर, व्यावहारीक, तर्कपूर्ण, मार्मिक, उपदेशात्मक तथा अलंकारिक आदि संवादों के प्रयोग से भाषा को रोचक, सजीव एवं सार्थक बना दिया है। संवादों की भरमार होते हुए भी क्लिष्टता की मात्रा कहीं भी दिखाई नहीं देती।

भाषाशैली की दृष्टि से लेखक ने प्रभावपूर्ण, रोचक एवं पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है। उन्होंने उपन्यास में शब्दप्रयोगों के विभिन्न रूपों का उपनाया हैं। कई पात्रा अशिक्षित हैं। अतः उनके बोलचाल में कुछ स्थानों पर अश्लिलता का अभास मिलता है। फिर भी कथानक के विकास में कोई बाधा नहीं निर्माण होती। भाषा को सौन्दर्य प्रदान करने के लिए विशेषण, रूपक, उपमानों के साथ-साथ मुहावरे-कहावते तथा सूक्तियों का भी प्रयोग किया है। भाषा के अनेक रूपों के साथ विविध शैलियों को भी उपनाया है। अतः मणि मधुकरजी प्रस्तुत उपन्यास की संवाद योजना तथा भाषा-शैली की दृष्टि से सफलता पा चुके हैं।

चतुर्थ अध्याय

" पत्तों की बिरादरी " : संवाद और भाषा-शैली।"

१. डॉ. प्रतापनारायण टण्डन - "हिन्दी उपन्यास कला" - पृ. २१९

२. डॉ. शान्ति मलिक - "हिन्दी नाटकों की शिल्पविधि का विकास पृ. ४१ से २७३

३. मणि मधुकर - " पत्तों की बिरादरी" पृ. ९

४. वहीं पृ. १६३

५. वहीं पृ. १९

६. वहीं पृ. ७९

७. वहीं पृ. १६८

८. वहीं पृ. १४९

९. वहीं पृ. ३०

१०. वहीं पृ. ८६

११. वहीं पृ. ६२

१२. वहीं पृ. १६३

१३. वहीं पृ. १६७

१४. वहीं पृ. १९

१५. वहीं पृ. १५५

१६. वहीं पृ. ११

१७. वहीं पृ. २०

१८.	मणि मधुकर - "पत्तों की बिरादरी"	पृ. ३२
१९.	वहीं	पृ. १५२
२०.	वहीं	पृ. ६७
२१.	वहीं	पृ. ९४
२२.	वहीं	पृ. २७
२३.	वहीं	पृ. ४४
२४.	वहीं	पृ. ६१
२५.	वहीं	पृ. ६८
२६.	वहीं	पृ. १४०
२७.	वहीं	पृ. १२
२८.	वहीं	पृ. १४
२९.	वहीं	पृ. ६६
३०.	वहीं	पृ. २२
३१.	वहीं	पृ. ७६
३२.	वहीं	पृ. ५८
३३.	वहीं	पृ. ९८
३४.	वहीं	पृ. ४८
३५.	वहीं	पृ. ८३
३६.	वहीं	पृ. १२९
३७.	वहीं	पृ. ३१
३८.	वहीं	पृ. ९५
३९.	वहीं.	पृ. ९५
४०.	वहीं	पृ. ८१

४१.	मणि मधुकर - "पत्तों की बिरादरी"	पृ. १६३
४२.	डा. सुरेश सिनहा : "हिन्दी उपन्यास"	पृ. ३९१,३९२
४३.	मणि मधुकर "पत्तों की बिरादरी" पृष्ठ	प
४४.	वहीं	
४५.	वहीं	
४६.	वहीं	
४७.	वहीं	
४८.	वहीं	पृ. ३७
४९.	वहीं	पृ. ४३
५०.	वहीं	पृ. ५३
५१.	वहीं	पृ. ६५
५२.	वहीं	पृ. १३५
५३.	वहीं	
५४.	वहीं	पृ. १२
५५.	वहीं	पृ. २७
५६.	वहीं	पृ. ३३
५७.	वहीं	पृ. ३३
५८.	वहीं	पृ. ५५
५९.	वहीं	पृ. ५३
६०.	वहीं	पृ. ११३
६१.	वहीं	
६२.	वहीं	
६३.	वहीं	पृ. ६१
६४.	वहीं	पृ. ९०

६५. मणि मधुकर "पत्तों की बिरादरी" पृ. १२२

६६. वहीं पृ. १६०

६७. वहीं पृ. २६

६८. वहीं पृ. ३७

६९. वहीं पृ. ८०

७०. वहीं पृ. १२०

७१. वहीं पृ. ५८

७२. वहीं पृ. ६०

७३. वहीं पृ. ९

७४. वहीं पृ. २५

७५. वहीं पृ. ३७

७६. वहीं पृ. १४५

७७. वहीं पृ. १६३

७८. वहीं पृ. ३०

७९. वहीं पृ. ६३

८०. वहीं पृ. १६७

८१. वहीं पृ. १९

८२. वहीं पृ. २०

८३. वहीं पृ. ३१

८४. वहीं पृ. १०

८५. वहीं पृ. १५७

८६. वहीं

८७. वहीं

८८. वहीं पृ. १२

८९.	मणि मधुकर "पत्तों की बिरादरी"	पृ. ४९
९०.	वहीं	पृ. ९५
९१.	डा. दुर्गाशंकर मिश्र "अज्ञेय का उपन्यास साहित्य"	पृ. ३४
९२.	मणि मधुकर "पत्तों की बिरादरी"	पृ. १८
९३.	वहीं	पृ. ११९,१२०
९४.	वहीं	पृ. १६
९५.	वहीं	पृ. २५
९६.	वहीं	पृ. ७०
९७.	वहीं	पृ. ११९
९८.	वहीं	पृ. ५८
९९.	वहीं	पृ. ३५
१००.	वहीं	पृ. ४४
१०१.	वहीं	पृ. २५
१०२.	वहीं	पृ. १००
१०३.	वहीं	पृ. १३२